ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-5* Issue-11* December- 2020
Innovation The Research Concept

जय शंकर प्रसाद के नाटक 'चंद्रगुप्त' में भारतीय संस्कृति

Indian Culture in Jai Shankar Prasad's Play 'Chandragupta'

Paper Submission: 00/00/2020, Date of Acceptance: 00/00/2020, Date of Publication: 00/00/2020

सतपाल
प्रवक्ता,
हिदी विभाग,
राजकीय वरिष्ठ माध्यमिक विधालय, हरियाणा, भारत

सारांश

छायावाद के स्तंभ जयषंकर प्रसाद के नाटक 'चंद्रगुप्त' में भारतीय संस्कृति का सुंदर एवं सजीव चित्रण किया गया है। प्रसाद जी के नाटकों में प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति की झलक स्पष्ट दिखाई देती है। प्राचीन भारतीय लोगों का रहन–सहन, आचार–विचार, वेषभूषा, संस्कृति, धार्मिकता, राजनीतिक चेतना, वर्ण व्यवस्था, सामाजिकता, राष्ट्रीयता, प्रेम एवं भाईचारा आदि का बड़ा ही सुंदर वर्णन अपने नाटकों में किया है। यद्यपि प्रसाद जी ने अपने नाटकों में तत्सम षब्दावली का अधिक प्रयोग किया है तथापि प्रसाद जी की शब्द–योजना समयानुसार एवं प्रासंगिक है। प्रसाद जी ने नाटकों में चित्रित भारतीय संस्कृति पाठकों को हमेशा भारतीय संस्कृति का अहसास कराती रहेगी।

Jayashankar Prasad's play 'Chandragupta', a pillar of cinematography, depicts a beautiful and lively depiction of Indian culture. The glimpse of ancient Indian history and culture is clearly visible in Prasad ji's plays. The ancient Indian people have described their way of life, ethics, dress, culture, religiosity, political consciousness, varna system, sociality, nationality, love and brotherhood etc. in their plays. Although Prasad ji has used more of the corresponding word in his plays, the word plan of Prasad ji is timely and relevant. The Indian culture depicted in the plays by Prasad ji will always make the readers feel the Indian culture.

मुख्य शब्द : संस्कृति, धार्मिकता, राजनीतिक, व्यवस्था, सामाजिकता, राष्ट्रीयता।

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति के परमोपासक, राष्ट्रीयता के गायक एवं हिन्दी साहित्य जगत के प्रसिद्ध ऐतिहासिक नाटककार श्री जयशंकर प्रसाद विरचित नाटक 'चंद्रगुप्त' में भारतीय संस्कृति का बखूबी चित्रण किया गया है। इनके द्वारा रचित नाटक में भारतीय संस्कृति की झलक निम्न रूपों में देखने को मिलती है।

वर्ण व्यवस्था

भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से ही समाज को वर्ण व्यवस्था के अनुसार चार वर्णों में बांटा गया है। हिन्दू समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, षूद्र इन चार वर्णों में बांटा गया था। ब्राह्मण का कार्य यज्ञ, हवन, अनुष्ठान इत्यादि कार्य करके अपनी आजीविका कमाते थे। क्षत्रिय का कार्य देष और राष्ट्र की सेवा करना था। वैश्य व्यापार का कार्य करते थें और क्षूद्र इन तीनों वर्णों के कार्यों में सहयोग करते थें। नाटक का यह अंष देखिए जिसमें आचार्य चाणक्य ब्राह्मण जाति के स्वाभिमान, व्याग, निस्पृह तथा आत्मनिर्भरता पर प्रकाष डालतें है–

'राजकुमार ब्राह्मण' न किसी के राज्य में रहता है और न किसी के अन्न से पलता है, स्वराज्य में विचरता है और अमृत होकर जीता है। यह तुम्हारा मिथ्या गर्व हैं। ब्राह्मण सब कुछ सामर्थ्य रखनें पर भी, स्वेच्छा से इन माया–स्तुपों का ठुकरा देता है, प्रकृति के कल्याण के लिए अपने ज्ञान का दान देता है।'[7]

आचार्य चाणक्य वररूचि को ब्राह्मण के आदर्ष गुणों को बताते हुए कहते है–'व्याग और क्षमा, तप और विद्या–तेज और सम्मान के लिए है– लोहे और सोने के सामने सिर झुकाने के लिए हम लोग ब्राह्मण नही बने है। हमारी दी हुई विभूति से हमीं को अपमानित किया जाए, ऐसा नही हो सकता।

कात्यायन! अब केवल पाणिनि से काम न चलेगा। अर्थषास्त्र और दण्ड–नीति की आवष्यकता हैं।'[8]

संस्कृतिः अर्थ और परिभाषा

'संस्कृति' शब्द 'सम' उपसर्ग के डुकृत्र (करने) धातु से 'सुट' का आगम करके 'क्तिन' प्रत्यय लगाकर बना है। इसका शाब्दिक अर्थ है– साफ या परिष्कृत करना।'[1]

श्री ब्रह्मानंद सरस्वती का मत है– '' संस्कृति षब्द 'कृ' धातू से भूषण अर्थ में 'सूट' का आगम करने पर बना है, जिसका अर्थ है– भूषण भृत सम्यक कृति या चेष्टा। अतः जिन चेष्टाओं द्वारा मनुष्य अपने जीवन के समस्त क्षेत्रों में उन्नति करना हुआ सुख षांति प्राप्त करता है, वही संस्कृति की जा सकती है, अथवा मनुष्य के लौकिक–पारलौकिक सर्वाभ्युदय के अनुकूल आचार–विचारों को 'संस्कृति' कहा जाता है।'[2]

डॉ0 वासुदेवशरण अग्रवाल का मत है– ''संस्कृति मनुष्य के भूत, वर्तमान और भावी जीवन का सर्वांगपूर्ण प्रकार है। हमारे जीवन का ढंग हमारी संस्कृति है। संस्कृति हवा में नही रहती, उसका मूर्तिमान रूप होता है। जीव ने नानाविध रूपों का समुदाय ही संस्कृति है।'[3]

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की मान्यता है–''सभ्यता का आंतरिक प्रभाव संस्कृति है। सभ्यता समाज की बाह्य व्यवस्थाओं का नाम है। संस्कृति व्यक्ति के अंतर के विकास का।'[4]

डॉ0 देवराज के अनुसार– ''संस्कृति का अर्थ समस्त सीखा हुआ व्यवहार होता है।''[5]

बी0एस0सान्याल नें संस्कृति का परिभाषित करने हुए लिखा है– संस्कृति सिद्धांत और व्यवहार में मूल्यों के साक्षात्कार के लिए प्रयुक्त षब्द है।''[6]

राष्ट्रीयता

कविवर जयषंकर प्रसाद भारतीय संस्कृति के परम भक्त तथा राष्ट्रीयता के श्रेष्ठ गायक है। उन्होनें अपने नाटकों द्वारा राष्ट्रीयता–स्वदेश व्यक्ति का अमर संदेष दिया है। उनके राष्ट्रीयता से परिपूर्ण कुछ गीत इस प्रकार है–

''अरूण यह मधुमय देश हमारा।
जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा।
सरस तामरस गर्म विभा पर नाच रही तरूशिखा मनोहर।
छिटका जीवन हरियाली पर–मंगल कुंकुम सारा।
लघु सुरधनु से पंख पसारे–शीतल मल्य समीर सहारे।
उड़ते खग जिस ओर मुँह कि–समझ नीड़ निज प्यारा।
बरसाती आँखों के बादल बनते जहाँ भरे करूण जल।
लहरें टकराती अनंत की–पाकर जहाँ किनारा।
हेंम–कुंभ ले उषा सवेरे–भरती ढुलकाती सुख मेरे।
मदिर उँघते रहते जब–जगकर रजनी भर तारा।
अरूण यह मधुमय यह देश हमारा ।। ।।[9]

सिल्यूकस के आक्रमण के समय राष्ट्र की रक्षा के लिए तक्षषिला की प्रजा में नवचेतना तथा नव जागृति फैलाती हुई अलका ने गाया है। यह गीत राष्ट्रीय भावनाओं से परिपूर्ण है–

''हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्व शुद्व भारती
स्वयं प्रभा समुज्जवला स्वतंत्रता पुकारती–
अमर्त्य वीरपुत्र हो दृढ़–प्रतिज्ञ सोच लो,
प्रषस्त पुण्य पंथ है–बढ़े चलो–बढ़े चलो।
असंख्य कीर्ति–रष्मियाँ विकीर्ण दिव्य दाह–सी।
सपूत मातृभूमि के रूकें न शूर साहसी।
अराति सैन्य सिंधु में–सुवाडवाग्नि–से जलो,
प्रवीर हो जयी बनो–बढ़े चलो–बढ़े चलो।''[10]

राजनीति एवं धार्मिकता

प्रसिद्व ऐतिहासिक नाटककार श्री जयषंकर प्रसाद ने अपने नाटकों में तत्कालीन राजनीति का बहुत संदर वर्णन किया है। नंद की राजसभा में आकर चाणक्य और चंद्रगुप्त बताते है कि भवनों की सेना निषध पर्वतमाला तक पहुँच गयी है और उसके मगध तक बढ़ आने की आषंका है। पंजाब के राजा पर्वतेष्वर ने उस सेना का रोकने का साहस किया है, अतः मगध को भी पर्वतेष्वर की सहायता करनी चाहिए। मगर नंद धर्मांधता के कारण उनका प्रस्ताव न केवल ठुकरा देता है अपितु दोनों को सभा से बाहर निकालने का आदेष भी देता है। जाने से पहले चाणक्य नंद का चेतावनी देते हुए कहता है–

''सावधान नंद! तुम्हारी धर्मांधता से प्रेरित राजनीति आँधी की तरह चलेगी, उसमें नंद वंष समूल उखड़ेगा। नियति–सुंदरी के भावों में बल पड़ने लगा है। समझ आ गया है षूद्र राज सिंहासन से हटाए जाएं और सच्चे क्षेत्रीय मूर्धाभिष्क्ति हों।।[11]

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि छायावादी व ऐतिहासिक नाटककार श्री जयषंकर प्रसाद ने अपने नाटक 'चंद्रगुप्त' में भारतीय संस्कृति का बड़ा ही सजीव व सुंदर वर्णन किया है। नाटककार ने अपने नाटक में तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था, राष्ट्रभक्ति व देषप्रेम, वर्ण व्यवस्था प्रकृति वर्णन व मनोवैज्ञानिकता आदि इन सभी के माध्यम से भारतीय संस्कृति के अतीत गौरव का गान किया है।

संदर्भ–ग्रंथ सूची

1. *डॉ. धीरेन्द्र वर्मा– हिन्दी साहित्य कोष, पृ0*
2. *कल्याण (हिन्दू संस्कृति अंक जनवरी), पृ0*
3. *गुरूदेव श्री रत्नमुनि–स्मृति ग्रंथ में 'संस्कृति का स्वरूप'षीर्षक लेख, पृ0*
4. *आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी–विचार और वितर्क, पृ0*
5. *डॉ. देवराज–भारतीय संस्कृति, पृ0*
6- *B.S. Sanyal--- Culture: An Introduction, P*
7. *जयशंकर प्रसाद– चंद्रगुप्त, पृ0*
8. *जयशंकर प्रसाद– चंद्रगुप्त, पृ0*
9. *जयशंकर प्रसाद– चंद्रगुप्त, पृ0*
10. *जयशंकर प्रसाद– चंद्रगुप्त, पृ0*
11. *जयशंकर प्रसाद– चंद्रगुप्त, पृ0*